अध्याय 1

भारत में कृषि की यात्रा

जो कृषक अपने पशुओं की अच्छे से देखभाल करते हैं और उनके हित के लिए कार्य करते हैं, प्रतिदिन अपने खेतों में कार्य करते हैं, मौसम का ज्ञान रखते हैं, बीजों के विषय में जागरूक होते हैं तथा परिश्रमी होते हैं, उन्हें सदैव अच्छी उपज की प्राप्ति होती है और कभी हानि नहीं होती।

– कृषिपराशर

चित्र 1.1 — (1) बैलों द्वारा हल से खेत की जुताई (2) कृषक द्वारा ट्रैक्टर से खेत की जुताई (3) महिलाओं द्वारा धान का रोपण (4) ट्रांसप्लांटर के उपयोग से पौधों का प्रत्यारोपण (5) मड़ाई (थ्रेशिंग) मशीन का उपयोग करके गेहूँ की फसल की कटाई (6) कश्मीर की डल झील पर सब्जियों का परिवहन।

महत्त्वपूर्ण प्रश्न ?

1. भारतीय कृषि की मुख्य विशेषताएँ क्या हैं?
2. खेती, जलवायु, मिट्टी और जल आपस में कैसे संबंधित हैं?
3. पारंपरिक और समकालीन पद्धतियाँ एक-दूसरे की पूरक कैसे हो सकती हैं?

0784CH01

भारत का कृषि परिदृश्य

कृषि मानव जाति के सबसे प्राचीन व्यवसायों में से एक है। इसमें कृषि योग्य मिट्टी तैयार करना, फसल उपजाना, पशुपालन और कई क्षेत्रों में सघन कृषि के अंतर्गत व्यापक रूप से वृक्षों को उगाना भी सम्मिलित है। कुछ क्षेत्रों में कृषक मत्स्यपालन भी करते हैं, तो कुछ क्षेत्रों में रेशम प्राप्त करने के लिए कोकून (कृमि) पालते हैं। मुख्यत: 'कृषि' के अंतर्गत खेती, पशुपालन, वानिकी और बागवानी सम्मिलित हैं।

इसे अनदेखा न करें

अंग्रेजी में कृषि हेतु *एग्रीकल्चर* शब्द का प्रयोग किया जाता है। वस्तुत: *एग्रीकल्चर* शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा से हुई है। *एग्री* का तात्पर्य खेत और *कल्चर* का तात्पर्य खेती करना होता है। भारत सरकार कृषि से संबंधित आर्थिक गतिविधियों को 'कृषि और सहायक गतिविधियों' के रूप में वर्गीकृत करती है। मुख्यत: इसमें कृषि, पशुपालन से संबंधित गतिविधियाँ, मधुमक्खी पालन, मत्स्यपालन, रेशम के कीड़े पालना, रेशम का धागा तैयार करना तथा कपास एवं जूट (पटसन) जैसे रेशों का उत्पादन सम्मिलित है।

2022–23 के आँकड़ों के अनुसार उस वर्ष देश की वस्तुओं और सेवाओं के कुल मूल्य (सकल घरेलु उत्पाद) में कृषि और उससे संबंधित गतिविधियों से 18 प्रतिशत से थोड़ा अधिक भाग प्राप्त हुआ। भारत की लगभग 46 प्रतिशत कार्यशील जनसंख्या अपने भरण-पोषण हेतु कृषि और उससे संबंधित गतिविधियों में संलग्न है (2022–2023)। भारत में अधिकतर परिवार किसी-न-किसी प्रकार से भूमि से जुड़े हुए हैं और कई स्थितियों में तो वे पीढ़ियों से उस पर खेती कर रहे हैं। निश्चित रूप से कृषि एवं उससे संबंधित गतिविधियाँ मानव जनसंख्या के पालन-पोषण के लिए अति आवश्यक हैं।

मड़ाई (थ्रेसिंग) डंठल या भूसे से खाने योग्य अनाज को हाथ या मशीन से पृथक करना।

आइए विचार करें

जब आप 'किसान' शब्द पढ़ते या सुनते हैं, तो आपके मन में क्या छवि निर्मित होती है? बहुत से व्यक्ति एक पुरुष की कल्पना करते हैं। यद्यपि भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि क्षेत्र में कार्य करने वाले व्यक्तियों में 75 प्रतिशत से अधिक महिलाएँ हैं (2025)। बुआई से लेकर कटाई और मड़ाई तक कृषि के अधिकतर कार्य महिलाएँ ही करती हैं।

© NCERT not to be republished

भारत का कृषि परिदृश्य पारंपरिक और आधुनिक कृषि विधियों का एक जीवंत मिश्रण है जिसमें भिन्न-भिन्न फसलें और गहरी सांस्कृतिक परंपराएँ हैं। पंजाब के सुनहरे गेहूँ के खेत, कश्मीर की केसर की घाटी, उत्तर-पूर्व के हरे-भरे चाय के बागानों या नीलगिरि से लेकर केरलम के हरे-भरे धान के खेतों तक, कृषि लंबे समय से राष्ट्र की पहचान का एक आधारभूत अंग रही है।

आइए पता लगाएँ

सामान्यतः आप जो भोजन करते हैं, उसकी एक सूची बनाइए। उसमें अनाजों, दालों, तेल, सब्जियों और फलों की पहचान कीजिए। अब भारत के भौतिक मानचित्र पर देखिए कि आप कहाँ रहते हैं (यदि आप चाहें तो पुस्तक के अंत में दिए गए भारत के राजनैतिक मानचित्र को भी देख सकते हैं)। आपके विचार से इनमें से कौन-सी खाद्य-सामग्रियाँ आपके क्षेत्र में उगाई जाती हैं? इनमें से कौन-सी सामग्रियाँ दूसरे स्थानों से आती हैं? आपके विचार से ये सामग्रियाँ आपके क्षेत्र में क्यों नहीं उगाई जाती हैं?

शायद आपने सोचा होगा कि फसल उगाना कई कारकों पर निर्भर करता है, जैसे— मिट्टी, मौसम, जल की उपलब्धता, भूभाग की बनावट और स्थलाकृति इत्यादि। अतः कृषि की कहानी इन सभी तथ्यों से जुड़ी हुई है। इस अध्याय में हम इनमें से कुछ बिंदुओं का अध्ययन करेंगे, परंतु उससे पूर्व हमें थोड़ा पीछे के समय में जाना होगा...

अतीत की गूँज

भारतीय कृषि की कहानी प्रागैतिहासिक काल से आरंभ होती है। पुरातात्विक परीक्षण से पता चलता है कि गंगा के मैदान में 7वीं या 8वीं सहस्राब्दी सा.सं.पू. (सामान्य संवत पूर्व) में चावल के दाने विद्यमान थे। यद्यपि कुछ विशेषज्ञों ने बताया है कि इसका अर्थ यह नहीं है कि चावल की खेती पूर्व से ही व्यवस्थित थी; इसे पूर्ण रूप से विकसित करने में कुछ और सहस्राब्दियाँ लगी होंगी। बलूचिस्तान के सिंधु-सरस्वती सभ्यता से पूर्व के एक स्थल मेहरगढ़ में जौ और श्रीअन्न (मोटा अनाज) की खेती भी 7वीं सहस्राब्दी सा.सं.पू. की मानी जाती है। बाद में जौ और गेहूँ हड़प्पावासियों की मुख्य फसलें थीं। कई हड़प्पा स्थलों से यह भी पता चलता है कि तीसरी सहस्राब्दी सा.सं.पू. में भी कुछ क्षेत्रों में श्रीअन्न और कई सब्जियों के साथ चावल भी विद्यमान था।

© NCERT not to be republished

समय के साथ कृषकों ने तिलहन (जैसे— तिल, कुसुम (करड़ी), अलसी, सरसों और अरंडी), फलियाँ (मूंग, उड़द और मेथी), रेशे वाली फसलें (कपास, सन, पटसन), सब्जियाँ तथा फल (अंगूर, खजूर, बेर, कटहल, आम, शहतूत और जामुन) उगाना सीख लिया।

इसे अनदेखा न करें

वेदों में यव (जौ), गोधूम (गेहूँ) और व्रीहि (चावल) के साथ-साथ तिल, उड़द और अनेक प्रकार की दालों और फलियों जैसी दूसरी फसलें का भी उल्लेख है।

अंतरफसल/ सह-फसल एक ही अवधि में दो या दो से अधिक भिन्न-भिन्न फसलें उगाने की प्रक्रिया।

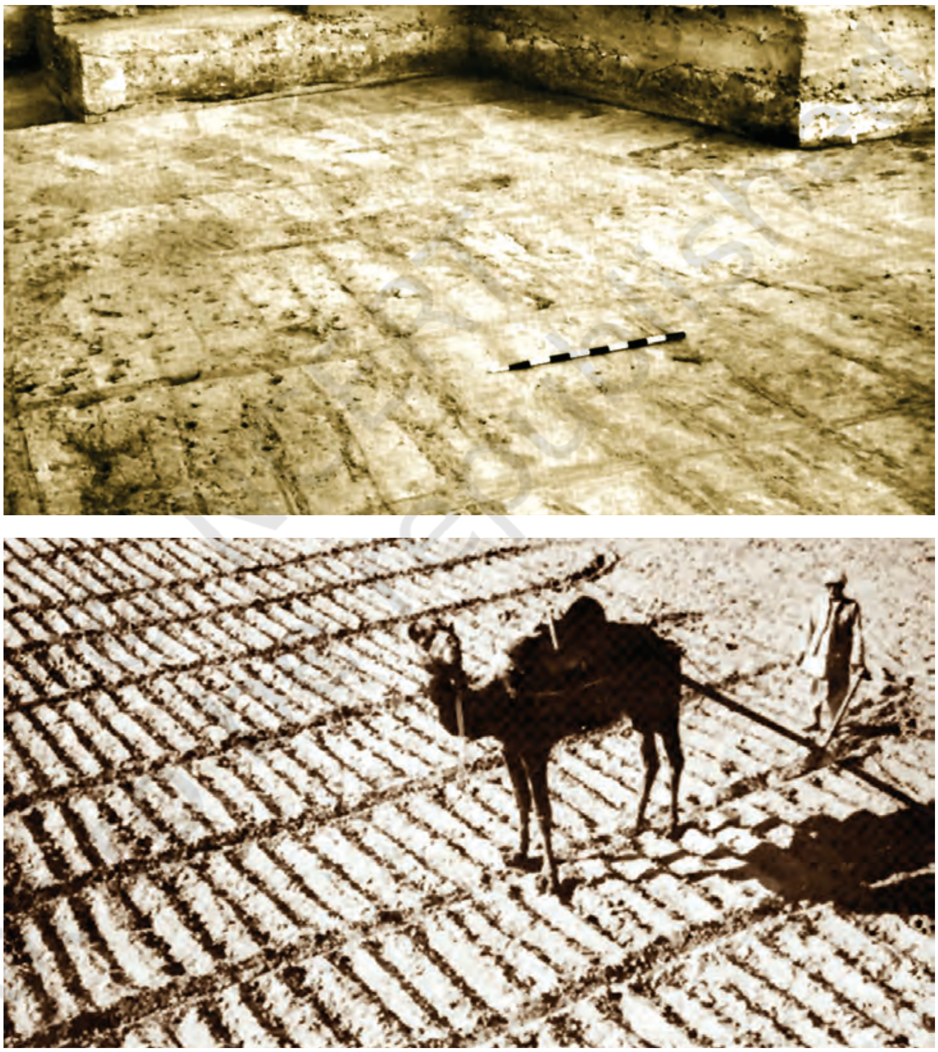

चित्र 1.2 — (ऊपर) लगभग 2800 सा.सं.पू. में हड़प्पा सभ्यता के कालीबंगा (राजस्थान) नामक स्थल पर अंतरफसल का पता हमें लंबवत खाँचों से चलता है। (नीचे) लगभग 4800 साल बाद 1960 के दशक में भी यही परंपरा प्रचलित थी।

चित्र-1.3 — अंतरफसल (सह-फसल) का एक उदाहरण गन्ने के साथ कद्दू उगाना।

इस काल में पशुओं को पालतू बनाना भी प्रारंभ हुआ। सिंधु-सरस्वती सभ्यता के नगरीकरण से पूर्व के काल (लगभग 3500 सा.सं.पू.) से ही मवेशी, गधे, भेड़, बकरियाँ, कुत्ते, सूअर, मुर्गे-मुर्गियाँ और अन्य पशुओं को पालतू बनाया जाने लगा था।

ऐतिहासिक काल में प्राचीन भारतीय ग्रंथों में कृषि से संबंधित विपुल ज्ञान प्राप्त होता है। कौटिल्य का *अर्थशास्त्र*, प्रारंभिक तमिलों का संगम साहित्य, *अमरकोश*, *कृषिपराशर*, वराहमिहिर की *बृहत्संहिता* और सुरपाल के *वृक्षायुर्वेद* आदि ग्रंथों में कृषि, बागवानी और वनस्पति जैव-विविधता से संबंधित विस्तृत विवरण मिलता है। कुछ ग्रंथों में पशुओं के पालन-पोषण और देखभाल का भी उल्लेख है।

सुरपाल द्वारा रचित *वृक्षायुर्वेद* में बीज-संस्कार, भूमि की जुताई की विधियाँ, रोपण प्रणालियाँ तथा अन्य अनेक विषयों पर निर्देश दिए गए हैं। "दूध से सिंचित, गोबर से मर्दित कर सुखाए गए तथा माक्षिक (मधु) और विडंग (वैद्यक दृष्टि से प्रस्तुत एक प्रकार की काली मिर्च) से अच्छी प्रकार से लेपित बीज निश्चित रूप से अंकुरित होते हैं।" वृक्षों के सिंचन से संबंधित निर्देश है— "शुष्क भूमि में नवरोपित वृक्षों को पंद्रह दिनों तक प्रात: सुबह और सायं जल देना चाहिए जब तक कि मिट्टी पूर्ण रूप से भीग न जाए।" इसके अतिरिक्त, विभिन्न प्रकार की मिट्टियों के लिए उपयुक्त सिंचन-विधियों का भी उल्लेख किया गया है। *बृहत्संहिता* में वर्णित कलम बंधन (ग्राफ्टिंग) की एक विधि वर्तमान में भी प्रचलन में है।

पौधों, पशुओं, मिट्टी और जलवायु के प्रकारों से लेकर सिंचाई की विधियों तक, हमें इन ग्रंथों में कृषि के विषय में हमारे पूर्वजों के ज्ञान और उनकी विधियों के विषय में बहुत सारी सूचनाएँ प्राप्त होती हैं।

कलम बंधन (ग्राफ्टिंग)
यह एक ऐसी तकनीक है जिसमें एक पौधे को दूसरे पौधे से इस प्रकार जोड़ा जाता है कि दोनों मिलकर एक ही पौधे के रूप में विकसित हों। इसमें कीट-प्रतिरोधक क्षमता या फलों की मधुरता जैसे वांछनीय गुणों का सयोजन संभव हो जाता है।

© NCERT not to be republished

जलवायु, ऋतुएँ तथा फसलें— कहाँ और कब क्या उगता है?

भारत की भौगोलिक और जलवायु विविधता देश के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में और वर्ष की भिन्न-भिन्न अवधियों में उगाई जाने वाली फसलों की विविधता को प्रभावित करती है। पाठ्यपुस्तक के इस भाग में भारत की जलवायु विविधता, प्रमुख कृषि ऋतुओं और देश की कृषि में मानसून की केंद्रीय भूमिका का अध्ययन करेंगे।

7वीं शताब्दी में भारत की यात्रा करने वाले चीनी तीर्थयात्री श्वेनजांग (आप इनसे इस पाठ्यपुस्तक में बाद में परिचित होंगे) के शब्दों में— "स्थान के अनुरूप जलवायु और भूमि की गुणवत्ता भिन्न-भिन्न होने के कारण भूमि की उपज भिन्न प्रकार की होती है। पुष्प, पौधे, फल और वृक्ष अनेक प्रकार के होते हैं और उनके नाम भी भिन्न-भिन्न होते हैं।"

इस पाठ्यपुस्तक के भाग 1 में हमने भारत की सात प्रकार की जलवायु के विषय में पढ़ा था।

पुनरावलोकन करें

भारत में पाई जाने वाली जलवायु के प्रकार हैं—

- → पर्वतीय (अल्पाइन) — हिमालयी क्षेत्र
- → शीतोष्ण — निम्न हिमालयी क्षेत्र
- → उपोष्णकटिबंधीय — उत्तरी मैदान
- → शुष्क — थार मरुस्थल
- → उष्णकटिबंधीय आर्द्र — पश्चिमी तटीय पट्टी, बंगाल की खाड़ी के द्वीप
- → अर्ध-शुष्क — मध्य दक्कन पठार
- → उष्णकटिबंधीय — पूर्वी भारत और दक्षिणी प्रायद्वीप

इनमें से विभिन्न क्षेत्रों में धूप और वर्षा की मात्रा भिन्न-भिन्न होती है, ऋतुओं के अनुसार तापमान में परिवर्तन होता है और मानसून का प्रभाव भी भिन्न-भिन्न ढंग से होता है।

भारत को 15 कृषि जलवायु क्षेत्रों में बाँटा गया है। सरलतम शब्दों में कहें तो जलवायु-कारक, विभिन्न प्रकार की मिट्टी, स्थलाकृति और पेड़-पौधों के प्रकारों को मिलाकर यह वर्गीकरण किया जाता है। यह वर्गीकरण सरकार और अन्य संस्थानों

© NCERT not to be republished

को कृषि उत्पादन में सुधार करने हेतु यह निर्धारित करने में सहायता करता है कि कौन-सी फसल कब और कैसे उगाई जाए। कृषि जलवायु क्षेत्रों के कुछ उदाहरण हैं— ऊपरी गंगा का मैदानी क्षेत्र, दक्षिणी पठार एवं पर्वतीय क्षेत्र और पश्चिमी शुष्क क्षेत्र।

मानसून और कृषि

भारतीय मानसून प्रणाली देश की कृषिगत विविधता में एक प्रमुख आधार है। यह वर्षण लाती है, जो अनेक फसलों के लिए अत्यंत आवश्यक है। भारत में दक्षिण-पश्चिमी मानसून और उत्तर-पूर्वी मानसून दोनों का प्रभाव देखा जाता है (इस पाठ्यपुस्तक के भाग 1 में 'भारत की जलवायु' अध्याय देखें)। दक्षिण-पश्चिमी मानसून जून से सितंबर तक वृष्टि (वर्षा) लाता है। यह उत्तरी एवं मध्य भारत में खरीफ फसलों की वृद्धि के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। उत्तर-पूर्वी मानसून अक्तूबर से दिसंबर तक सक्रिय रहता है और भारत के पूर्वी तथा दक्षिणी क्षेत्रों में वृष्टि लाता है। मालाबार (केरलम) और कोरोमंडल (तमिलनाडु) के मैदानों सहित तटीय क्षेत्रों में दक्षिण-पश्चिम और उत्तर-पूर्वी दोनों मानसूनों से वर्षा होती है।

इन दोनों मानसून कालों की वर्षा के कारण दक्षिण भारत के कृषक मध्य समयावधि में भी फसल उगा पाते हैं। इसके विपरीत, उत्तर भारत के कृषकों के लिए यह अपेक्षाकृत शुष्क ऋतु होती है। यहाँ के कृषक अपनी फसलों की सिंचाई के लिए जल के दूसरे स्रोतों, जैसे कि भूजल, नदियों, नहरों और तालाबों की मिट्टी में संचित नमी पर निर्भर रहते हैं। तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल और आंध्र प्रदेश जैसे राज्यों में मानसून और सिंचाई की पर्याप्त उपलब्धता के कारण वर्षभर धान की खेती की जाती है।

चित्र 1.4 — दक्षिण भारत में मूँगफली की सिंचित फसल

आइए पता लगाएँ

कल्पना कीजिए कि आपके राज्य में लगातार दो वर्षों तक सामान्य से कम मानसूनी वर्षा हुई। ऐसी स्थिति में कौन-सी वस्तुएँ आपके भोजन से लुप्त हो सकती हैं या उनकी उपलब्धता दुर्लभ हो सकती है?

© NCERT not to be republished

ऋतुओं और फसलों का आवर्तन — खरीफ, रबी और जायद

भारतीय कृषि मुख्य रूप से तीन कृषि ऋतुओं में विभक्त है— खरीफ, रबी और जायद।

कृषक सदियों से इसी ऋतु-चक्र का अनुसरण कर रहे हैं। इसके परिणामस्वरूप वर्षभर अनेक प्रकार के कृषि उत्पाद उपलब्ध रहते हैं। यह आवर्तन उन कारकों में से एक है, जो जन-सामान्य के लिए भोजन की आपूर्ति सुनिश्चित करता है। खरीफ, रबी और जायद शब्द अरबी मूल के हैं और इनका प्रयोग मुगल काल से प्रचलन में है।

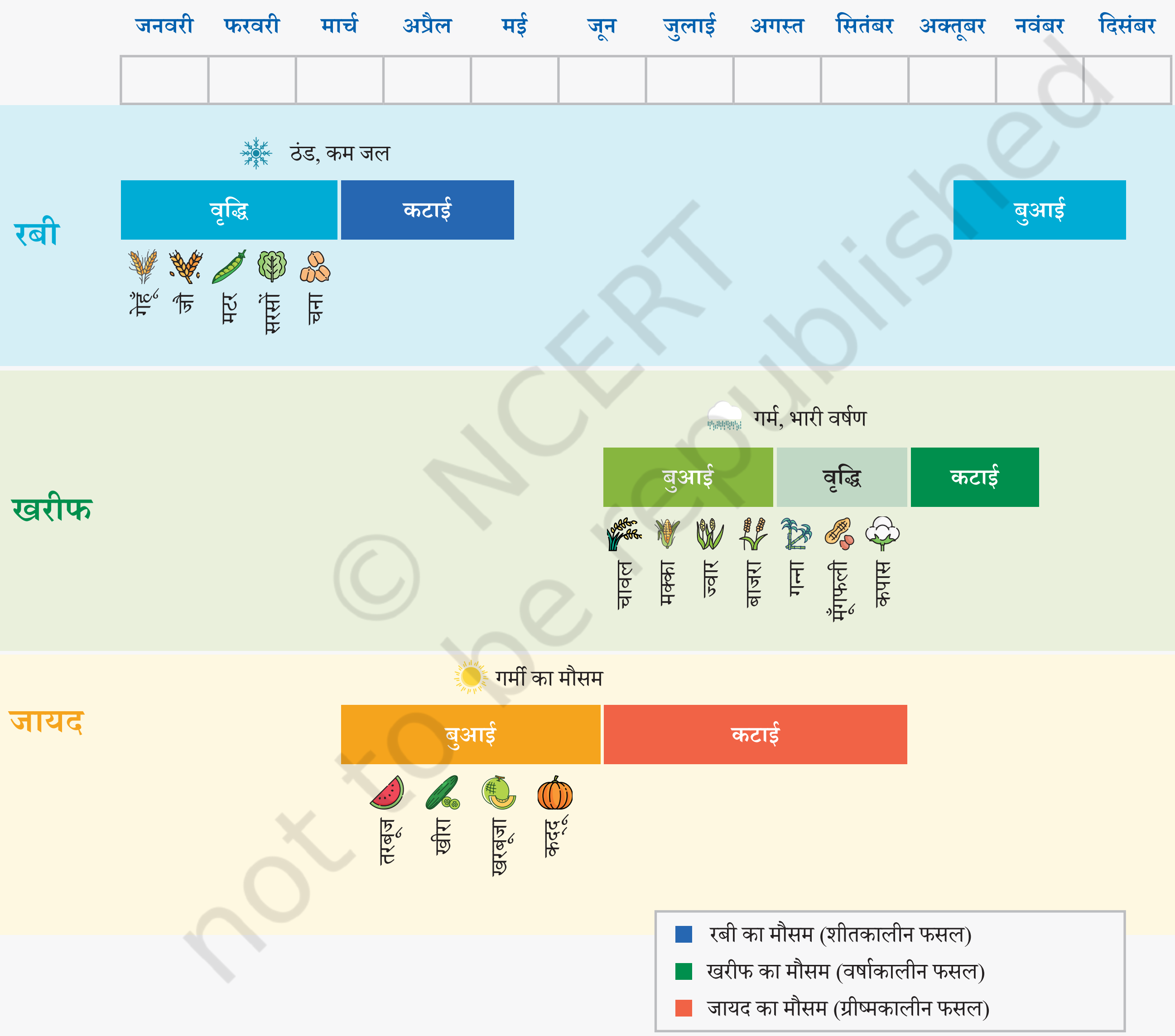

चित्र 1.5 — भारत के अधिकांश भागों में खरीफ, रबी और जायद की फसलें और मौसम के अनुसार इनकी बुआई-कटाई

© NCERT not to be republished

इसे अनदेखा न करें

इन तीन तरह की फसलों के लिए अरबी शब्दों के व्यापक प्रचलन से पूर्व इन्हें केदार (आर्द्र भूमि की फसलें), हैमन (शीतकालीन फसलें) और ग्रैष्मिक (ग्रीष्मकालीन फसलें) कहा जाता था।

इनमें से प्रत्येक फसल के मौसम की अपनी विशिष्ट चुनौतियाँ भी होती हैं। उदाहरण के लिए, खरीफ की फसलें मानसून के समय पर आने पर अत्यधिक निर्भर करती हैं। इसी प्रकार अत्यधिक वर्षा से भी फसलें नष्ट हो जाती हैं, जिससे विशेषकर कृषकों और उनके परिवारों को गंभीर कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

आइए पता लगाएँ

अपने राज्य या केंद्रशासित प्रदेश में एक वर्ष में उगाई जाने वाली फसलों की एक सूची तैयार कीजिए और उन्हें खरीफ, रबी और जायद फसलों में वर्गीकृत कीजिए।

चित्र 1.6 — सरसों (आगे) और गेहूँ (पीछे) की रबी फसलें

चित्र 1.7 — बाजरा, एक खरीफ फसल

© NCERT not to be republished

इसे अनदेखा न करें

अर्थशास्त्र में कृषि से संबंधित अनेक विषयों का विवरण खंडों में वर्णित है, जिनमें भूमि और बीज तैयार करने के साथ-साथ कृषकों को पारिश्रमिक देना और दूसरे आवश्यक विषय सम्मिलित हैं। "उत्तम वर्षा ऋतु वही मानी जाती है जिसमें वार्षिक वर्षा का एक-तिहाई भाग ऋतु के आरंभ ('श्रावण'— जुलाई–अगस्त) और अंत ('कार्तिक'— अक्तूबर–नवंबर) में तथा दो-तिहाई भाग मध्य ('भाद्रपद'— अगस्त–सितंबर और 'अश्विन'— सितंबर–अक्तूबर) में होता है।" आपको क्या लगता है कि यह कथन क्यों दिया गया था? (*संकेत— क्या इसका संबंध फसल चक्र से हो सकता है?*)

ह्यूमस

ह्यूमस मिट्टी में विद्यमान काला जैविक पदार्थ है जो पौधों और पशुओं के सड़ने से निर्मित होता है। इसमें पोषक तत्त्व प्रचुर मात्रा में होते हैं और यह मिट्टी में नमी बनाए रखता है। ह्यूमस लैटिन भाषा का शब्द है जिसका अर्थ 'धरती' या 'मिट्टी' होता है।

मृदा— कृषि का आधार

मिट्टी पृथ्वी की वह ऊपरी पतली परत (भूपर्पटी) है जो पौधों के जीवन को आधार प्रदान करती है। यह मृदा या मिट्टी लाखों वर्षों में चट्टानों के टूटने और जैविक पदार्थों के सड़ने से निर्मित होती है। यह कृषकों के लिए सबसे आवश्यक संसाधन है क्योंकि यह फसलों की वृद्धि के लिए आवश्यक पोषक तत्त्व, जल तथा संरक्षण प्रदान करती है। पाठ्यपुस्तक के इस भाग में भारतीय उपमहाद्वीप में पाई जाने वाली विभिन्न प्रकार की मिट्टियों और विशेष फसलों के साथ उनके सह-संबंधों का अध्ययन किया गया है।

मृदा का निर्माण कैसे होता है?

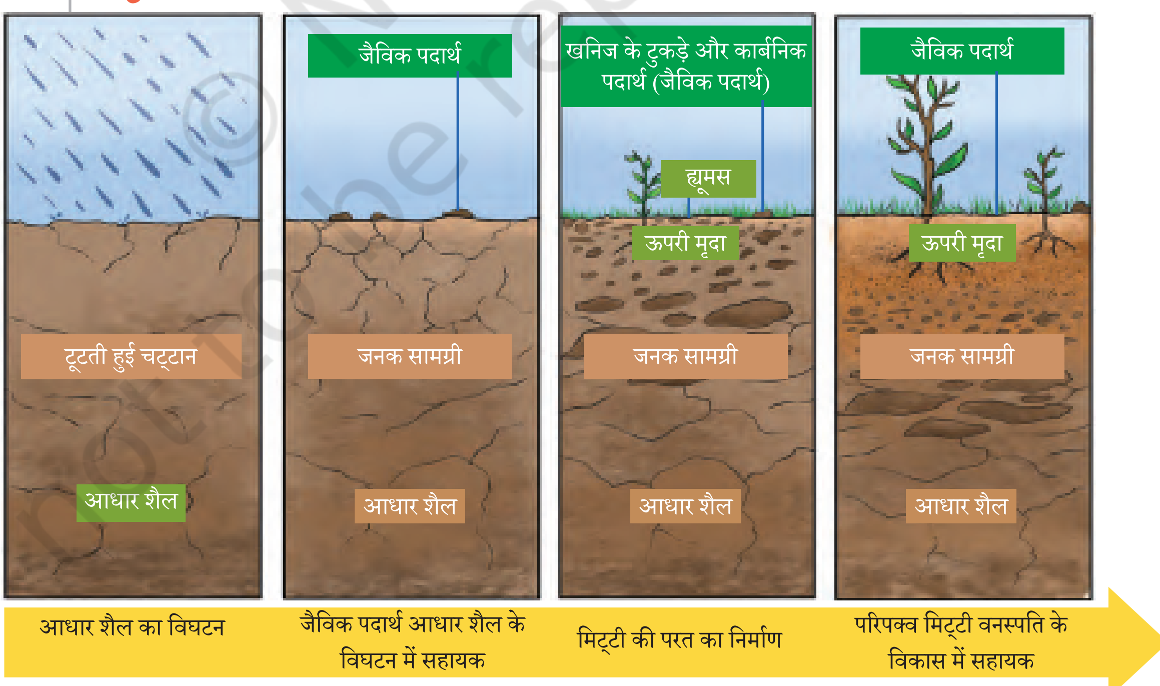

चित्र 1.8 — मृदा निर्माण प्रक्रिया का एक सरल आरेख, यह प्रक्रिया एक शताब्दी से लेकर कई सहस्र वर्षों तक चलती है।

© NCERT not to be republished

भारत की मृदाएँ

भारत में विविध प्रकार की मृदा पाई जाती है, जिनमें से प्रत्येक की अपनी विशेषताएँ होती हैं। *अमरकोश* जैसे प्राचीन ग्रंथों में मृदा की उर्वरता के आधार पर बारह प्रकार की कृषि भूमि का उल्लेख मिलता है। वर्तमान में, भारत की मृदा को छह मुख्य प्रकारों में विभाजित किया गया है— जलोढ़ मृदा, काली मृदा, लाल मृदा, लैटेराइट मृदा, मरुस्थलीय मृदा तथा पर्वतीय (अल्पाइन) मृदा।

आइए पता लगाएँ

- → उपरोक्त बताए गए प्रत्येक वर्ग में कम-से-कम दो राज्यों के नाम बताइए।
- → आपके राज्य या केंद्रशासित प्रदेश में मुख्य रूप से किस प्रकार की मृदा पाई जाती है?
- → मृदा हमें स्थानों के इतिहास की कथाएँ बताती है कि सहस्रों वर्षों में जब मृदा निर्माण हो रहा था, तो क्या हुआ होगा। अपने आस-पड़ोस से मृदा के कुछ नमूने एकत्रित कीजिए और उन्हें ध्यानपूर्वक देखिए (यदि संभव हो तो आवर्धक लेंस या सूक्ष्मदर्शी (माइक्रोस्कोप) का उपयोग करके मृदा का परीक्षण कीजिए)। इन नमूनों में क्या-क्या घटक दिखाई देते हैं? मृदा की उत्पत्ति कैसे हुई होगी? क्या आपको मानवीय गतिविधि के कोई संकेत दिखाई देते हैं? समय के साथ, इन गतिविधियों का मृदा पर क्या प्रभाव पड़ सकता है?

आधार शैल

आधार शैल उस मूल चट्टान को कहा जाता है जिससे अपक्षय, अपरदन तथा अन्य प्राकृतिक प्रक्रियाओं के माध्यम से नई शैलें और मृदाएँ विकसित होती हैं।

मृदा-फसल संबंध

हमने ऊपर जिन कृषि जलवायु स्थितियों के विषय में संक्षेप में जाना, उनके अतिरिक्त, फसलें उस मृदा के प्रकार से भी बहुत अधिक प्रभावित होती हैं, जिसमें वे उगाई जाती हैं।

आइए पता लगाएँ

- → एक लघु समूह परियोजना बनाइए। भिन्न-भिन्न प्रकार की मृदा में उगने वाली सब्जियों, फलों और वृक्षों की पहचान कीजिए।
- → एक पारिवारिक भोजन प्रवाह-चित्र बनाइए जिसमें आपके प्रिय व्यंजनों को उन विभिन्न फसलों से जोड़िए जिनसे वे निर्मित होती हैं और उन फसलों को उस मृदा से जोड़िए जिसमें वे उगाई जाती हैं।

© NCERT not to be republished

अपक्षय

अपक्षय उस प्रक्रिया को कहते हैं जिससे चट्टानें और खनिज कुछ भौतिक, रासायनिक अथवा जैविक कारणों से टूटकर मृदा के कणों में परिवर्तित हो जाते हैं।

गाद

यह एक महीन, धूल जैसी तलछट होती है, जो चट्टानों और खनिजों के कणों से निर्मित होती है। इसके कण चिकनी मृदा से बड़े होते हैं तथा रेत के कणों से छोटे होते हैं। इसी कारण नदियाँ इन्हें पर्वतों से मैदानों तक सरलता से ले जाती हैं।

रेतीली/बलुई मृदा— यह मुख्यत: रेत के सूक्ष्म कणों से निर्मित होती है। जब इसमें अल्प मात्रा में जल, वायु और जैविक पदार्थ मिलते हैं, तो इस रेतीली मृदा का निर्माण होता है।

पर्वतीय मृदा— इसका निर्माण बर्फ के जमने और पिघलने से होता है, जिससे चट्टानों का अपक्षय होता है। यह मृदा पतली, खुरदरी और पथरीली होती है।

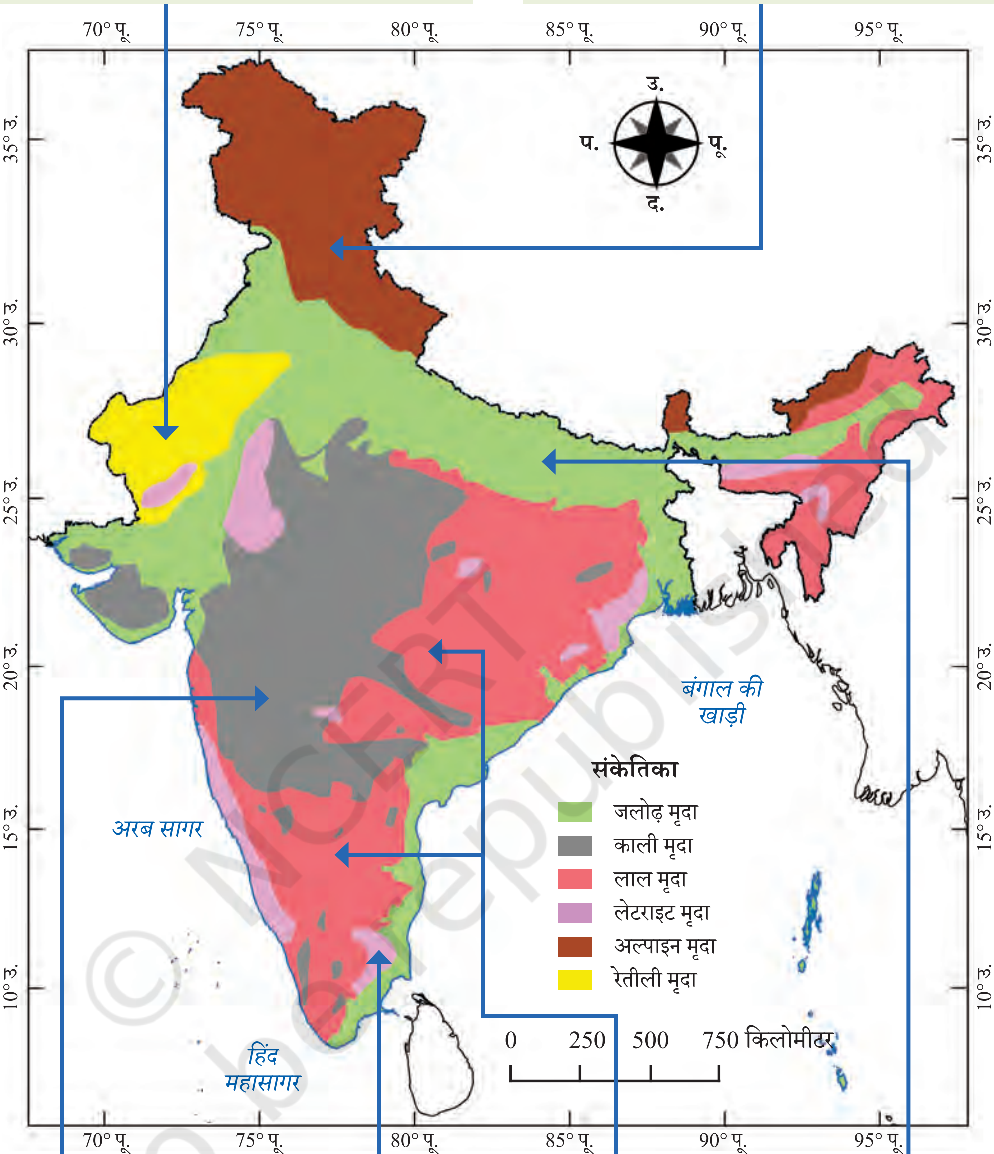

काली मृदा या कपास वाली मृदा का निर्माण ज्वालामुखी चट्टानों के विघटन से होता है। इसमें जलधारण क्षमता अधिक होती है और यह बहुत उर्वर होती है।

लेटराइट मृदा या ईंट वाली मृदा— यह वर्षा से चट्टानों के टूटने से निर्मित होती है। उष्ण जलवायु में यह कठोर हो जाती है। इस प्रक्रिया में अधिकांश खनिज तत्त्व बह जाते हैं तथा मुख्यत: लोहा और एल्युमिनियम ही शेष बचते हैं, जो हवा और पानी से प्रतिक्रिया करके मृदा को लाल रंग प्रदान करते हैं।

लाल मृदा— यह लावा (जो धीरे-धीरे ठंडा हुआ हो) या पुरानी चट्टानों के टूटने से निर्मित होती है। ये लाल इसलिए होती हैं क्योंकि इनमें लौह नाम का एक रसायन होता है; जब लौह हवा और पानी से अभिक्रिया करता है तो इसका रंग लाल हो जाता है। यह अधिक उपजाऊ नहीं होती।

जलोढ़ मृदा— पर्वतों और पठारों से नदियों द्वारा लाई गई गाद (कीचड़, रेत और अन्य महीन कण); पोषक तत्त्वों से भरपूर।

चित्र 1.9 — भारत में पाई जाने वाली प्रमुख मृदाओं के प्रकार तथा उनके निर्माण को दर्शाता हुआ एक सरल मानचित्र। अधिकांश क्षेत्रों में स्थानीय स्तर पर मृदा के प्रकारों में भिन्नता हो सकती है।

© NCERT not to be republished

मक्का, बाजरा, मूँगफली, सब्जियाँ और फल।

चावल, चाय, जायफल, इलायची, सब्जियाँ और फल।

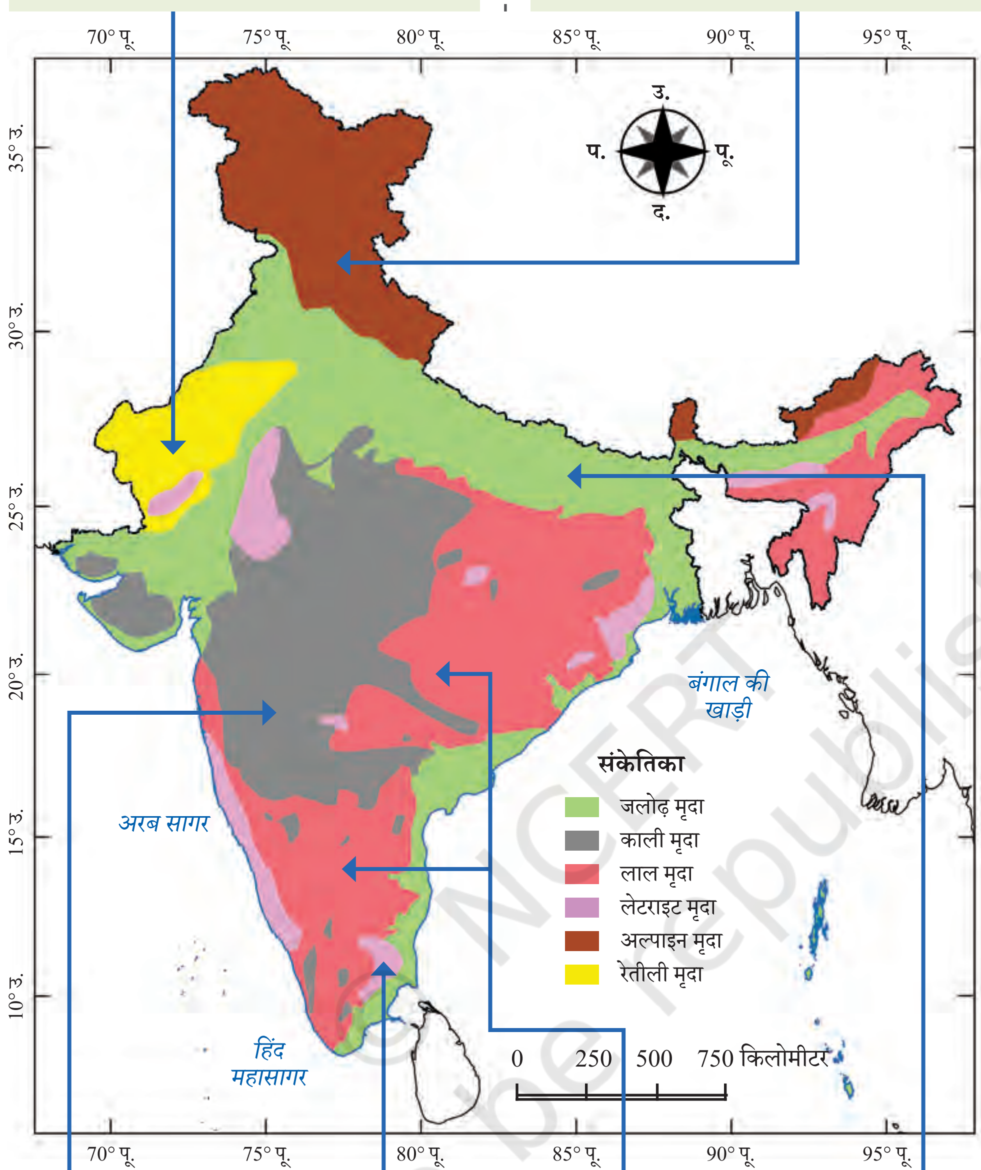

गेहूँ, चावल*, ज्वार, उड़द दाल, सूरजमुखी, अलसी, मूँगफली, कपास, गन्ना, फल और सब्जियाँ।

चावल, गेहूँ*, रागी, मूँगफली, सूरजमुखी, चाय, कॉफी, रबर, सिनकोना, नारियल, सुपारी, काजू, शकरकंद, कपास।

चावल, गेहूँ*, रागी (मंडुआ, अरहर दाल), मूँगफली और सरसों, कपास, तंबाकू, सब्जियाँ और फल।

चावल, गेहूँ, मक्का, जौ, बाजरा*, चना दाल, सरसों और मूँगफली, गन्ना, जूट, कपास, फल और सब्जियाँ।

*ये फसलें इन मृदाओं के लिए आदर्श नहीं है किंतु समुचित सिंचाई व्यवस्था के माध्यम से इनकी खेती संभव है।

चित्र 1.10 — विभिन्न मृदा-प्रकारों वाले क्षेत्रों में उगाई जाने वाली फसलों के कुछ उदाहरण (इन सभी विवरणों को स्मरण रखना आवश्यक नहीं है)

© NCERT not to be republished

मृदा की देखभाल

उत्तम फसल के लिए स्वस्थ मृदा अत्यंत आवश्यक है। मृदा एक जटिल पारिस्थितिकी तंत्र है, जिसमें जीवाणु, कवक, केंचुए तथा कीट जैसे विभिन्न सूक्ष्म एवं स्थूल जीव होते हैं। इसमें खनिज, जैविक पदार्थ (ह्यूमस), जल और वायु होती है। ये जीव जैविक पदार्थों का अपघटन कर मृदा के स्वास्थ्य को सुधारते हैं, जिससे मृदा स्वस्थ पौधों को आश्रय दे पाती है। इसकी उर्वरता और स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए कृषक विभिन्न मृदा संरक्षण विधियों का प्रयोग करते हैं।

मृदा संरक्षण
इसका आशय उन विधियों से है जिनके माध्यम से मृदा के क्षरण को रोका जा सकता है और मृदा की उत्पादकता को सुरक्षित रखा जा सकता है।

- **पारंपरिक विधियाँ**— हमारे पूर्वजों ने मृदा के संरक्षण हेतु अनेक कुशल एवं व्यावहारिक विधियों के प्रयोग किए हैं। इनमें से **फसल चक्र परिवर्तन** एक ऐसी ही विधि है, जिसमें विभिन्न ऋतुओं में एक ही खेत में भिन्न-भिन्न प्रकार की फसलें उगाई जाती हैं, जिससे मृदा में किसी विशेष पोषक तत्त्व की कमी नहीं होती। एक अन्य महत्त्वपूर्ण विधि रही है— **बहु फसली पद्धति**, जिसमें एक ही खेत में अनेक फसलें उगाई जाती थीं। इससे कीटों के प्रकोप की आशंका कम होती थी और कम-से-कम एक फसल की पैदावार सुनिश्चित होती थी। फसलों का चयन इस प्रकार किया जाता था कि एक ही खेत से समय-समय पर कटाई होती रहे। एक अन्य महत्त्वपूर्ण विधि है— **समोच्च जुताई**, जिसमें वर्षा जल से होने वाले मृदा-अपरदन को रोकने हेतु पहाड़ी ढलान के प्राकृतिक घुमावों के अनुरूप जुताई की जाती है। किसान मृदा के पोषक तत्त्वों को पुन: जीवंत करने के लिए गोबर जैसी **जैविक खाद** का उपयोग भी करते थे।

इसे अनदेखा न करें

क्या आप जानते हैं कि 'पंचगव्य' गाय से प्राप्त पाँच उत्पादों का एक किण्वित (फर्मेंटेड) मिश्रण है— गोबर, मूत्र, दूध, दही और घी? अद्यतन अध्ययनों से ज्ञात होता है कि यह जैव-उर्वरक के रूप में कार्य करता है, फसलों की वृद्धि और उत्पादकता में वृद्धि करता है और साथ ही रोग-प्रतिरोधक क्षमता में भी वृद्धि करता है।

- **आधुनिक दृष्टिकोण**— वर्तमान में, पर्वतीय क्षेत्रों में कृषि के लिए समतल खेत बनाने के लिए सीढ़ीदार खेती जैसी आधुनिक विधियों का उपयोग किया जाता है, जिससे जल का बहाव धीमा होता है और मृदा का कटाव कम होता है। वनीकरण अर्थात वृक्षारोपण एक प्रभावी विधि है, जो मृदा के कटाव को रोकने में सहायता करती है। मल्चिंग विधि अर्थात फसल के बचे हुए अवशेषों को पुन: खेत में मिलाना जैसी कुछ पारंपरिक विधियों का वर्तमान में भी किसान प्रयोग करते हैं। उर्वरकों का सटीक एवं संतुलित प्रयोग भूमि की दक्षता को बढ़ाता और उपयोग को संभव बनाता है तथा मृदा की उर्वरता को भी बनाए रखता है।

not to be republished © NCERT

चित्र 1.11 — धान के खेतों की मेड़ों पर लगे केले के पेड़ पवन-अवरोधक (विंडब्रेकर) का कार्य करते हैं, जो मृदा को अपने स्थान पर स्थिर बनाए रखते हैं और कृषकों को एक अतिरिक्त फसल भी प्रदान करते हैं।

चित्र 1.12 — हरितगृह (ग्रीनहाउस) में मृदा में नमी को ज्ञात करने के लिए ड्रोन का उपयोग

ग्रीनहाउस
काँच या प्लास्टिक से बनी एक पारदर्शी ढकी हुई संरचना जो नियंत्रित वातावरण में पौधों के विकास के लिए सूर्य के प्रकाश और गर्मी को संचित करती है।

जल— वर्षा-आधारित और सिंचित कृषि

कृषि हेतु जल एक आधारभूत संसाधन है। इसके बिना फसलें नहीं उग सकतीं। जल की उपलब्धता एक महत्त्वपूर्ण कारक है, जो यह निश्चित करता है कि भारत के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में कृषि कैसे की जाती है। पाठ्यपुस्तक के इस भाग में सिंचाई की दो प्रमुख प्रणालियों का विश्लेषण किया गया है— वर्षा-आधारित कृषि एवं सिंचित कृषि।

(क) वर्षा-आधारित कृषि

वर्षा-आधारित कृषि वह पद्धति है जिसमें कृषि पूर्णत: वर्षा पर ही निर्भर करती है। इस प्रकार की खेती उन क्षेत्रों में सामान्य है जहाँ मानसून ऋतु में पर्याप्त वर्षा होती है।

किंतु, वर्षा पर निर्भर रहने वाले कृषकों को सूखे एवं अप्रत्याशित मानसून जैसी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इन समस्याओं से निपटने के लिए उन्होंने कुछ अनुकूल उपाय विकसित किए, जैसे— सूखा प्रतिरोधी फसलों का चयन, जल संरक्षण की पारंपरिक तकनीकों का उपयोग।

(ख) सिंचित कृषि

सिंचित कृषि में फसलों को पानी देने के लिए कृत्रिम विधि का उपयोग किया जाता है। इस प्रकार की सिंचाई खेती की पैदावार बढ़ाने और मानसून की वर्षा पर निर्भरता कम करने के लिए बहुत आवश्यक है।

भारत में सिंचाई का इतिहास अत्यंत प्राचीन है। सिंधु सभ्यता के समय से ही भारत में विभिन्न प्रकार की जल संरचनाओं का निर्माण होता रहा है। संपूर्ण देश में जल-संरचनाओं

चित्र 1.13 — वीरमगाम (गुजरात) स्थित मुनसर झील। यह भारत के अनेक नगरों की झीलों की भाँति ही लोगों द्वारा बनाई गई एक झील है; इसे 11वीं शताब्दी में चालुक्य वंश की रानी मीनलदेवी ने निर्मित कराया था। इसके किनारों पर कुछ छोटे-छोटे मंदिर और कुछ बड़े मंदिर हैं। इन मंदिरों की उपस्थिति इस बात को स्पष्ट करती है कि जलाशयों को परंपरागत रूप से पवित्र माना जाता है।

© NCERT not to be republished

की एक समृद्ध शब्दावली विकसित हुई, जैसे— कुल, कुंड, आहर, पोखर, खड़ीन, अराकेरे, कोलम, सुरंगम, तडागम् और एरी आदि।

कुछ **पारंपरिक सिंचाई प्रणालियों** में 'फड़' प्रणाली और बाँस की बूँद-बूँद सिंचाई प्रमुख हैं। कृषक छोटे तालाब भी निर्मित करते हैं जिसमें वर्षा के जल को एकत्र किया जाता है, जिससे ये मृदा को दीर्घकाल तक नमी प्रदान करते हैं।

चित्र 1.14 — पूर्वोत्तर भारत में उपयोग की जाने वाली बाँस सिंचाई प्रणाली

- 'फड़' प्रणाली सामुदायिक सिंचाई व्यवस्था है, जो विशेष रूप से महाराष्ट्र राज्य में प्रचलित है। इसमें छोटी नहरों द्वारा नदी के जल को खेतों तक पहुँचाया जाता है।
- पूर्वोत्तर भारत के कुछ क्षेत्रों में **बाँस ड्रिप (बूँद-बूँद) प्रणाली** से सिंचाई की जाती है। यहाँ कृषक पारंपरिक रूप से जल स्रोतों से पानी अपने खेतों तक पहुँचाने के लिए बाँस की नलिकाओं का उपयोग करते हैं।

पुनरावलोकन करें

इस पाठयपुस्तक के भाग 1 में आप 'कल्लनई' से परिचित हुए, जो एक भव्य बाँध है। लगभग 1800 साल पहले 'करिकाल' ने कावेरी नदी पर इस बाँध का निर्माण कराया था। यह एक भव्य और जल की दिशा को परिवर्तित करने वाली प्रभावशाली संरचना है, जो हजारों हेक्टेयर भूमि की सिंचाई करती है।

समय के साथ सिंचाई प्रणालियाँ सरल उपायों से विकसित होकर उन्नत तकनीकों में परिवर्तित हो गईं। आधुनिक सिंचाई तकनीकों में बूँद-बूँद (ड्रिप) और छिड़काव सिंचाई सम्मिलित हैं।

- **बूँद-बूँद सिंचाई (ड्रिप इरिगेशन)**, जिसे मंद-मंद सिंचाई (ट्रिकल इरिगेशन) भी कहा जाता है। इसमें नलिकाओं और उत्सर्जकों के जाल के माध्यम से जल धीरे-धीरे और सीधे पौधे की जड़ों तक पहुँचता है।

© NCERT not to be republished

आइए विचार करें

कल्पना कीजिए कि आपके पौधों की जड़ों के समीप छोटी-छोटी नलिकाओं का एक जाल बिछाया गया है जिसमें छोटे-छोटे छिद्र हैं। ये नलिकाएँ जल के किसी स्रोत से जुड़ी हैं और जब जल प्रवाहित किया जाता है तो यह छिद्रों से धीरे-धीरे और निरंतर टपकता है, जिससे केवल जड़ों को पानी मिलता है। इस लक्षित जल-आपूर्ति से यह सुनिश्चित होता है कि जल का उपयोग कुशलता से हो जिससे अपव्यय कम-से-कम हो।

चित्र 1.15 — पौधों तक जल कुशलता से पहुँचाने के लिए बूँद-बूँद (ड्रिप) सिंचाई

- **फुहारा (स्प्रिंक्लर)** सिंचाई में जल को वायु में फुहार के रूप में डाला जाता है, जो कृत्रिम बारिश की भाँति फसलों पर गिरता है।

चित्र 1.16 — गेहूँ के खेत में लगे फुहारे

ये आधुनिक सिंचाई विधियाँ जल का अधिक कुशलता से उपयोग करने में सहायता करती हैं। यह अत्यंत आवश्यक भी है क्योंकि भारत के अनेक क्षेत्रों में भूमिगत जल-भंडार शीघ्रता से कम हो रहे हैं। सिंचाई प्रणालियों के विकास का भारत के कृषि परिदृश्य पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है, जिससे अल्प वर्षा वाले क्षेत्रों में भी कृषि संभव हो पाई है। इसने फसलों के उत्पादन और देश के लिए अधिक स्थिर खाद्य आपूर्ति सुनिश्चित करने में सहायता की है।

बीज

बीज कृषि का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण घटक है। परिवारों में पीढ़ी-दर-पीढ़ी बीज सुरक्षित रखे जाते हैं। सामुदायिक स्तर पर उन्हें संरक्षित रखा जाता है और आपस में बाँटा जाता है। कुछ क्षेत्रों में महिलाएँ विवाह के पश्चात अपने ससुराल ले जाने वाले उपहारों के रूप में भी

© NCERT not to be republished

इन्हें ले जाती हैं। अधिक उपज देने वाले बीजों का सावधानीपूर्वक चयन कर उन्हें अगली बुआई के मौसम में उपयोग के लिए सुरक्षित रखा जाता था।

अर्थशास्त्र में विभिन्न प्रकार के बीजों की बुआई से पूर्व उनकी तैयारी के निर्देश दिए गए हैं। उदाहरण के लिए, कपास के बीजों पर गाय का गोबर लगाने की विधि बताई गई है। अनाज, फलियों और दालों को कुछ दिनों तक ओस में भिगोकर रखना होता है और उसके पश्चात बोने से पूर्व धूप में सुखाया जाता है। रोपाई से पूर्व गन्ने के कटे हुए भाग पर शहद, घी, वसा के मिश्रण से लेप लगाकर गाय के गोबर से ढकने की परंपरा भी वर्णित है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आई.सी.ए.आर.) ने गाय के गोबर और मूत्र से निर्मित 'बीजामृत' नाम के मिश्रण को अन्य सामग्रियों के साथ मिलाकर, बुआई से पूर्व बीजों पर लगाने की विधियाँ विकसित की हैं। इससे बीज खराब होने से बचते हैं और बीजों के अंकुरण का समय भी कम हो जाता है।

इसे अनदेखा न करें

प्राचीन भारतीय कृषकों ने बीज बुआई के लिए एक देशज यंत्र का आविष्कार किया था। इस बुआई यंत्र से मृदा तैयार करना, बीज बोना और नाली को बंद करने का कार्य एक ही समय में हो जाता था। इससे उस कार्य में लगने वाले श्रम की बचत हो जाती थी जिसे पहले तीन चरणों में अलग-अलग करना पड़ता था।

वर्तमान में, अधिकतर कृषक विभिन्न कंपनियों से बीज क्रय करते हैं। ये बीज वैज्ञानिक विधियों से निर्मित किए जाते हैं, जिनसे अधिक उपज होती है तथा ये कीट-प्रतिरोधी होते हैं। किंतु, बाद में पौधे से जो बीज निकलते हैं, वे अगली ऋतु में बुवाई योग्य नहीं होते। इसकी व्यापक आलोचना भी होती है, क्योंकि इस कारण कृषकों की इन बीज कंपनियों पर निर्भरता बढ़ जाती है।

कृषि पद्धतियाँ— पारंपरिक ज्ञान तथा आधुनिक नवाचार

शताब्दियों से भारतीय कृषकों ने कृषि की अनेक विधियाँ विकसित की हैं। इनमें से कुछ प्राचीन ज्ञान और परंपराओं पर आधारित हैं, जबकि कुछ आधुनिक विधियाँ हैं, जो आधुनिक प्रौद्योगिकी का उपयोग करती हैं। वर्तमान में अनेक कृषक इन दोनों प्रकार की विधियों का समन्वित उपयोग करते हैं।

© NCERT not to be republished

पारंपरिक कृषि प्रणालियाँ

पारंपरिक कृषि में पौधे और मृदा (मृदा-तंत्र) को एक पूरी प्रणाली माना जाता है। मृदा को पोषक तत्त्वों का मूल स्रोत माना जाता है, जिसके साथ-साथ खेत की खाद के रूप में अन्य पोषक स्रोत भी प्रयुक्त होते हैं। मृदा में उपस्थित जीवाणु, कवक इत्यादि मिट्टी में उपस्थित पोषक तत्त्वों को ऐसे रूपों में परिवर्तित करते हैं, जिन्हें पौधे सरलता से ग्रहण कर सकें। इसके स्थान पर पौधे अपनी जड़ों के द्वारा जीवों को ऊर्जा प्रदान कर उनके विकास में सहायता करते हैं।

चित्र 1.17 — उत्तराखंड में सीढ़ीदार खेती

सामान्यतः पारंपरिक खेती लघु स्तर के संसाधनों पर आधारित होती है और पर्यावरण से सीधे संबंधित होती है। 'सीढ़ीदार खेती' इसका एक उदाहरण है। यह पहाड़ी ढलानों पर उपयोग की जाने वाली एक विधि है। कृषक खेती हेतु समतल भूमि बनाने के लिए पहाड़ी ढलान पर सीढ़ीदार खेत का निर्माण करते हैं, जिससे मृदा-अपरदन रुकता है और जल-संरक्षण होता है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने लगभग 5000 पारंपरिक कृषि विधियों को प्रलेखित किया है और उनमें से सौ से अधिक का परीक्षण किया है। यह पाया गया है कि इनमें से 85 प्रतिशत से अधिक कृषि विधियों को आधुनिक विज्ञान ने प्रमाणित माना है तथा रासायनिक पदार्थों का उपयोग कम करते हुए मृदा की उर्वरता को सुधारने के लिए उनका उपयोग किया जा सकता है।

इसे अनदेखा न करें

सामान्यतः पारंपरिक कृषि प्रणालियाँ प्राकृतिक चक्रों, जैसे ऋतु-चक्र के अनुरूप होती हैं और प्रायः परिवारजनों तथा पालतू पशुओं की भागीदारी पर निर्भर करती हैं। इसके उदाहरणों में 'कुलागर' और 'गोकृषि' शामिल हैं।

→ **कुलागर**— यह शब्द कोंकणी भाषा के 'कुल' अर्थात 'परिवार' और 'अगर' अर्थात 'भंडार' से बना है। यह एक पारंपरिक गृहस्थ कृषि प्रणाली है जहाँ परिवार अपने घरों के आस-पास एक व्यवस्थित सिंचाई प्रणाली बनाकर अनेक प्रकार के खाद्यान्न, नकदी फसलें, फल, सब्जियाँ, मसाले और औषधीय पौधे उगाते हैं। यह कृषि प्रणाली भारत के कोंकण के मैदानों (गोवा) में प्रचलित है।

© NCERT not to be republished

→ **गोकृषि**— यह एक समग्र कृषि पद्धति है, जिसमें गायों से प्राप्त गोबर का जैविक खाद के रूप में उपयोग किया जाता है और खेतों को जोतने के लिए बैलों का उपयोग किया जाता है।

आधुनिक कृषि

समकालीन कृषि आधुनिक कृषि विधियों पर आधारित होती है जिसमें प्रौद्योगिकी, मशीनों और कृषि की नई तकनीकों का उपयोग होता है। 1960 और 1970 के दशकों में आधुनिक कृषि में **हरित क्रांति** के रूप में एक बड़ा निर्णायक मोड़ आया। इस क्रांति की निम्नलिखित विशेषताएँ थीं—

- अधिक उपज देने वाले बीजों की किस्में (प्रजातियाँ),
- सिंचाई का विस्तार,
- रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का प्रयोग, तथा
- मशीनी उपकरणों का उपयोग।

चित्र 1.18 — एम.एस. स्वामीनाथन, भारत में हरित क्रांति के जनक एवं भारत रत्न से सम्मानित

इस क्रांति से खाद्यान्नों, विशेष रूप से— गेहूँ और चावल के उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई और खाद्यान्न के क्षेत्र में भारत आत्मनिर्भर बना। ट्रैक्टर, हार्वेस्टर और अन्य मशीनों के प्रयोग से कृषि कार्य तीव्र और सुगम हुआ। तब से कृषि 'भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़' बन गई है।

पिछले कुछ दशकों में हरित क्रांति के दृष्टिकोण और पद्धतियों की सीमाएँ स्पष्ट रूप से दिखने लगी हैं, जैसे— दीर्घकाल में मृदा की उर्वरता में कमी, भूमिगत जल का क्षय, कीटनाशकों और उर्वरकों से मृदा एवं जल का प्रदूषण तथा मानव और पशुओं के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव। वैज्ञानिकों के अध्ययन से यह सिद्ध हुआ है कि ग्रामीण क्षेत्रों में कैंसर के मामलों की वृद्धि हुई है। अत: विश्वभर के अधिकतर कृषि वैज्ञानिक इस प्रकार की कृषि की संधारणीयता पर प्रश्न उठा रहे हैं।

चित्र 1.19 — भारत में गेहूँ उत्पादन में आई क्रांति की स्मृति में जारी किया गया डाक-टिकट। टिकट में प्रदर्शित स्तंभ आरेख पर ध्यान दीजिए।

संधारणीय मार्ग

वर्तमान वर्षों में विकसित आधुनिक विधियों की उत्पादकता को पारंपरिक ज्ञान की विवेकशीलता के साथ मिलाकर संधारणीय कृषि विकसित करने की दिशा में लोगों की रुचि में वृद्धि हुई है। यह दृष्टिकोण भारतीय ज्ञान परंपरा से प्रेरित है और पर्यावरण के लिए उपयोगी है तथा लंबे समय तक चलने वाली खेती की विधियों पर केंद्रित है। इसका एक उदाहरण जैविक कृषि का पुनरुत्थान है, जिसमें रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का उपयोग नहीं किया जाता है। इसके स्थान पर यह प्राकृतिक उर्वरकों पर निर्भर करता है, जैसे— खाद, खली (बीजों से तेल निकालने के पश्चात शेष भाग) और पशुओं के मल से निर्मित खाद। एक और उदाहरण नीम-आधारित कीटनाशकों का उपयोग है। ये नैसर्गिक होते हैं और रासायनिक कीटनाशकों की तुलना में पर्यावरण के लिए अपेक्षाकृत कम हानिकारक होते हैं।

इसे अनदेखा न करें

सिक्किम विश्व का प्रथम शत-प्रतिशत जैविक राज्य है। वर्ष 2014 में सिक्किम ने रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों पर प्रतिबंध लगाकर और प्राकृतिक कृषि पद्धतियों पर ध्यान देकर संधारणीय कृषि के लिए प्राकृतिक कृषि पद्धतियों का प्रयोग करते हुए जैविक कृषि को अपनाया। (हमने इस पाठ्यपुस्तक के भाग 1 में सिक्किम का भ्रमण किया था।)

आइए पता लगाएँ

पारंपरिक विधियों से प्रेरित आधुनिक कृषि समाधानों की पहचान कीजिए (उदाहरण के लिए, नीम आधारित उपाय)।

पारंपरिक और आधुनिक विधियों की तुलना करने पर हमें एक संतुलन की आवश्यकता स्पष्ट दिखाई देती है। हरित क्रांति जैसी आधुनिक विधियाँ बहुत अधिक उत्पादक होती हैं और अल्प समय में तीव्रता से अधिक मात्रा में खाद्य उत्पन्न कर सकती हैं। किंतु, जैसा कि हमने ऊपर देखा कि हरित क्रांति के दीर्घकालिक दुष्परिणाम हुए हैं। रसायनों के उपयोग से जल-स्रोत प्रदूषित होते हैं और पारिस्थितिकी-तंत्र को बाधित करते हैं। उदाहरणस्वरूप, परागण के लिए अत्यावश्यक मधुमक्खियों जैसे जीवों को क्षति पहुँचाकर पारितंत्र को असंतुलित कर देना। दूसरी ओर, पारंपरिक विधियाँ अधिक सुदृढ़ और संधारणीय होती हैं क्योंकि वे प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित कर कार्य करती हैं;

© NCERT not to be republished

यद्यपि, उनके प्रयोग से उत्पादन में अपेक्षाकृत कमी हो सकती है। वर्तमान चुनौती यह है कि आधुनिक नवाचारों का उपयोग करके भोजन की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए दोनों पद्धतियों के मध्य संतुलन बनाया जाए और साथ ही अपने पूर्वजों की संधारणीय कृषि प्रणालियों को भी अपनाया जाए।

इसे अनदेखा न करें

खाद्य और कृषि संगठन (एफ.ए.ओ.) ने भारत की तीन कृषि प्रणालियों को वैश्विक स्तर पर महत्त्वपूर्ण कृषि धरोहर के रूप में मान्यता दी है। इनमें हैं— कश्मीर में केसर की खेती, ओडिशा की पारंपरिक कृषि प्रणालियाँ, जिनमें वन प्रबंधन सम्मिलित है तथा केरलम में समुद्र तल से नीचे की कृषि पद्धतियाँ, जिसमें फसल उगाना और मछली पकड़ना सम्मिलित है।

चित्र 1.20 — (1) केसर के फूलों का खेत, कश्मीर। (2) वन और भूमि आधारित एकीकृत कृषि प्रणाली, ओडिशा। (3) खारे पानी में धान की एकीकृत कृषि, मत्स्यपालन और पशुपालन, केरलम।

इसे अनदेखा न करें

यदि आपको लगता है कि पौधों के विकास के लिए मृदा अनिवार्य है, तो पुन: विचार कीजिए। 'जल-संवर्धन' (हाइड्रोपोनिक्स) एक ऐसी विधि है जिससे पौधों को पोषक तत्त्वों से युक्त जल-विलयन में उगाया जाता है तथा आवश्यक खनिज तत्त्व सीधे जड़ों तक पहुँचाए जाते हैं। इस विधि का उपयोग नियंत्रित वातावरण में किया जाता है, जिससे यह नगरीय कृषि और कम उपजाऊ मृदा वाले स्थानों के लिए एक अच्छा विकल्प बन जाता है।

चित्र 1.21 — जल संवर्धन विधि के उपयोग से उगाई जा रहीं सब्जियाँ

सरकार की भूमिका

भारत के अनेक राज्यों ने कृषकों की सहायता हेतु विविध सहयोगी व्यवस्थाएँ विकसित की हैं जिनके अंतर्गत कृषकों को बीज, खाद और कीटनाशक, मौसम के पूर्वानुमान संबंधी सूचनाएँ, नवीन कृषि पद्धतियों पर अनुसंधान और प्रशिक्षण इत्यादि सम्मिलित हैं।

सरकार सिंचाई के लिए कम कीमतों पर बिजली भी उपलब्ध कराती है ताकि उत्पादन लागत में कमी आए। 'प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना' जैसी योजनाओं के माध्यम से कृषक वित्तीय सहायता भी प्राप्त कर सकते हैं। अंत में सरकार कृषकों से फसलें क्रय करती है, जिससे उन्हें अपनी उपज बेचने में कोई कठिनाई न हो और उपज का उचित मूल्य मिल सके।

चित्र 1.22 — कृषकों के लिए एक सरकारी बीमा योजना का उदाहरण।

© NCERT not to be republished

शीत भंडारणों (कोल्ड स्टोरेज) को प्रोत्साहन देने और अंकीय (डिजिटल) प्रौद्योगिकी के उपयोग से सूचना देने और विपणन केंद्रों तक बेहतर पहुँच होने से कृषकों को अपनी उपज के लिए अधिक अनुकूल मूल्य प्राप्त करने में सहायता मिलती है। (इस पाठ्यपुस्तक के भाग 1 में 'बाजारों की समझ' अध्याय देखिए।)

आइए पता लगाएँ

कुछ दिनों तक रेडियो पर कृषकों के लिए विशेष कार्यक्रम सुनिए अथवा दूरदर्शन पर कृषकों से संबंधित कोई कार्यक्रम देखिए। इनके माध्यम से दी जाने वाली सूचनाओं को ध्यानपूर्वक लिखिए। आपने जो सूचनाएँ एकत्रित की हैं, उनका वर्गीकरण कीजिए और इस गतिविधि के समय आपके मन में जो प्रश्न आए, उन पर एक संक्षिप्त प्रतिवेदन तैयार कीजिए।

चुनौतियाँ

भारतीय कृषकों को अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। उनमें से एक प्रमुख है— भू-जोत का छोटा होना, क्योंकि परिवार के सदस्यों में प्रत्येक पीढ़ी में भूमि विभाजित होती जाती है। औसत भू-जोत का आकार लगभग तीन-चौथाई हेक्टेयर है; जो लगभग एक औसत फुटबॉल मैदान के क्षेत्रफल के बराबर होता है।

भू-जोत
भूमि का वह क्षेत्र जिसका स्वामी कोई व्यक्ति हो।

हेक्टेयर
1 हेक्टेयर = 10000 वर्ग मीटर। (एकड़ की पुरानी यूनिट, लगभग 4047 वर्ग मीटर, वर्तमान में भी भारत में बड़े पैमाने पर उपयोग होती है।)

लघु भू-जोत वाले कृषक प्राय: पर्याप्त आय अर्जित नहीं कर पाते हैं। किसानों के लिए अपने ऐसे छोटे खेतों में ट्रैक्टर और अन्य मशीनों का उपयोग करना भी कठिन होता है क्योंकि ये मशीनें बड़े खेतों के लिए निर्मित की गई होती हैं और इन्हें क्रय करना या किराए पर लेना महँगा होता है। यद्यपि हाल के वर्षों में छोटे खेतों के लिए भी मशीनों का निर्माण होने लगा है।

परंपरागत रूप से, खेती करने वाले परिवारों की कमाई के लिए फसलों के अतिरिक्त भी आय के अन्य स्रोत होते हैं। वे गाय, बकरी, मुर्गी पालते हैं, मधुमक्खी और मछली इत्यादि का भी पालन करते हैं। जहाँ संभव हो, वे जंगल से प्राप्त होने वाली सामग्रियाँ एकत्रित करते हैं। अनेक कृषक अपने खेतों की मेड़ों पर फलदार और इमारती लकड़ी हेतु वृक्ष लगाते हैं। विविधता से समृद्धि आती है। तथापि, वर्तमान में यह किसानों को सम्मानजनक जीवन-स्तर प्रदान करने लिए अपर्याप्त सिद्ध हो रहा है।

कृषक इस समय की सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक जलवायु परिवर्तन का भी सामना कर रहे हैं। मौसम के स्वरूप में बढ़ती अनिश्चितता (जैसे— असमय वर्षा) और

© NCERT not to be republished

अधिक बार होने वाली प्रतिकूल घटनाओं (जैसे— गंभीर सूखा या अत्यधिक वर्षा) के कारण, कृषकों को फसल नष्ट होने का गहरा संकट होता है, जिससे अनेक बार भारी क्षति होती है। जैसे-जैसे हमारी पृथ्वी तेजी से गर्म हो रही है, वैसे-वैसे इस स्थिति के और भी गंभीर होने की संभावना है।

आइए विचार करें

अपनी उपजाऊ जलोढ़ मृदा के कारण सहस्रों वर्षों से गंगा का बेसिन लाखों लोगों के लिए भोजन और जल का स्रोत रहा है— वर्तमान में, 50 करोड़ से अधिक लोग इस पर निर्भर हैं। इसके उपरांत भी, कुछ वर्षों से गंगा नदी पर दबाव बढ़ रहा है और वह स्वयं के पुनर्भरण में असमर्थ होती जा रही है; गर्मी में इसके कुछ भागों में जलस्तर इतना कम हो जाता है कि नौकाएँ भी संचालित नहीं हो पातीं।

इसके अनेक कारण हैं— वैश्विक तापन में वृद्धि के कारण हिमालय के हिमनद बहुत तेजी से पिघल रहे हैं; बहुत सारा पानी सिंचाई के लिए मोड़ दिया जाता है; कृषि और उद्योगों द्वारा भूमिगत जल का व्यापक दोहन और सैकड़ों बाँध नदी के प्राकृतिक प्रवाह में अवरोध डालते हैं। समाधान उपलब्ध हैं, परंतु यदि गंगा की स्थिति यही बनी रही, तो इसके बेसिन में खेती धीरे-धीरे अलाभकारी और अस्थिर हो सकती है, जिससे लाखों लोगों की आजीविका और भारत की खाद्य-उत्पादन व्यवस्था पर संकट उत्पन्न हो जाएगा।

प्राय: ऐसी चुनौतियों के कारण कृषकों को आर्थिक संकट में ऋण लेना पड़ता है, परंतु बाद में उन ऋणों का पुनर्भुगतान कठिन हो जाता है और वे ऋण के जाल में फँस जाते हैं। परिणामत:, कुछ अनुमानों के अनुसार प्रतिदिन 2300 कृषक खेती छोड़ने पर विवश हो रहे हैं। इस अध्याय में वर्णित नवीन उपायों और विधियों के माध्यम से यह आशा है कि भविष्य में भारत के प्रत्येक क्षेत्र में कृषि समृद्ध होगी।

आगे बढ़ने से पहले...

- भारतीय कृषि में पारंपरिक और आधुनिक दोनों पद्धतियों का समन्वय होता है। इसमें फसल-उत्पादन, पशुपालन, वानिकी आदि विविध गतिविधियाँ सम्मिलित हैं।
- भारत में कृषि यहाँ की विविध जलवायु तथा मानसूनी व्यवस्था से घनिष्ठ रूप से जुड़ी है, यहाँ प्राय: तीन प्रमुख फसल-ऋतु होती हैं— खरीफ, रबी और जायद।
- भारत में पाए जाने वाले छह प्रमुख मृदा-प्रकार यह निर्धारित करते हैं कि क्षेत्र में कौन-सी फसलें उगाई जाएँगी। मृदा का स्वास्थ्य समृद्ध एवं संधारणीय कृषि के लिए अत्यंत आवश्यक है।

© NCERT not to be republished

- बीज या तो पारंपरिक रूप से पीढ़ी-दर-पीढ़ी संरक्षित किए जाते हैं अथवा कंपनियों से अधिक पैदावार वाले प्रकारों के रूप में क्रय किए जाते हैं। इससे कभी-कभी बीजों के लिए कंपनियों पर निर्भरता उत्पन्न हो जाती है।
- संधारणीय कृषि में आधुनिक प्रौद्योगिकी का उपयोग पर्यावरण के अनुकूल पद्धतियों के साथ मिश्रित किया जाता है जैसे कि परिष्कृत सिंचाई।
- कृषकों को लघु जोत, जलवायु परिवर्तन, आधुनिक कृषि उपकरणों का महँगा होना और विपणन संबंधी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।
- सरकार के द्वारा सूचना की उपलब्धता, अनुसंधान और प्रशिक्षण के साथ-साथ विभिन्न प्रकार की वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है।

प्रश्न और क्रियाकलाप

1. केरलम के कृषक चावल उगाते हैं जबकि पंजाब के कृषक अधिकतर गेहूँ उगाते हैं, क्यों? दोनों राज्यों के कृषक अपनी-अपनी फसलें बदल लें तो इसके क्या परिणाम हो सकते हैं?
2. निम्नलिखित का मिलान करें—

स्तंभ अ	स्तंभ ब
(क) खरीफ फसलें	(i) शीत ऋतु में उगाई जाने वाली फसलें
(ख) रबी फसलें	(ii) मानसून के समय उगाई जाने वाली फसलें
(ग) जलोढ़ मृदा	(iii) पर्वतीय क्षेत्रों में पाई जाने वाली पतली, खुरदरी और पथरीली मृदा
(घ) सीढ़ीदार कृषि	(iv) ग्रीष्म ऋतु में उगाई जाने वाली फसलें
(ङ) पर्वतीय मृदा	(v) नदियों द्वारा जमा की गई पोषक तत्त्वों से समृद्ध मृदा
(च) जायद फसलें	(vi) पहाड़ी ढलानों पर की जाने वाली कृषि पद्धति

3. कुछ फसलें केवल विशिष्ट क्षेत्रों में ही क्यों अच्छी तरह विकसित होती हैं?
4. आधुनिक प्रौद्योगिकी ने कृषकों की सहायता किस प्रकार की है?

© NCERT not to be republished

5. संधारणीय कृषि क्यों आवश्यक है? इस पर एक छोटी टिप्पणी लिखिए।
6. वर्तमान में कृषकों को किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, उनके नाम बताइए। इनका जन-सामान्य पर क्या प्रभाव पड़ सकता है?
7. कक्षा में इस विषय पर चर्चा कीजिए— "पारंपरिक सिंचाई की विधियाँ आधुनिक विधियों से उन्नत हैं"।
8. एक छोटा निबंध लिखिए जिसमें बताइए कि जब आपकी आयु 60 वर्ष होगी, तब कृषि कैसी हो सकती है। आप अपनी कल्पना को चित्रों एवं रंगों के माध्यम से भी अभिव्यक्त कर सकते हैं।
9. छोटे-छोटे समूह बनाइए और गंगा के बेसिन को प्रभावित करने वाली समस्याओं पर चर्चा कीजिए। अपने समाधानों और उनके कारणों (आपके तर्क) के साथ एक प्रस्तुति तैयार कर कक्षा में साझा कीजिए और उस पर चर्चा कीजिए। आपके अध्यापक इस कार्य में आपका मार्गदर्शन करेंगे।
10. 'अतीत की गूँज' अनुभाग में उल्लिखित फसलों को देखकर बताइए कि आपके घर में कौन-कौन सी फसलें उपयोग में लाई जाती हैं? आप अपने अवलोकनों के आधार पर क्या निष्कर्ष निकाल सकते हैं?

© NCERT not to be republished